THE TIMES OF INDIA

Date: 18-02-26

Get Halfway There

India should be realistic about AI sovereignty. Given where it is, 50% of the job done will be creditable

TOI Editorials

The year opened with Trump capturing Maduro, underscoring the extent to which even a major state's sovereignty can be constrained by US military reach. When it comes to AI, however, almost every nation except US is similarly constrained – able to develop and deploy AI only so far as global tech supply chains, cloud infra and chip exports permit.

Consider China. At the start of last year, its DeepSeek AI models were disrupting US markets by outpacing established chatbots and prompting stock gyrations. This month, China's Byte Dance released Seedance 2.0, an advanced text-to-video generation model that has gone viral domestically and caught global attention for its film-quality outputs. Hollywood studios and rights holders have already raised copyright concerns, arguing that such models operate without meaningful safeguards against infringement. Despite the capability on display, China's AI ecosystem remains only partly sovereign – heavily dependent on foreign-made high-end chips that Washington can restrict.

India is even further from AI sovereignty. It doesn't yet possess a homegrown foundational model of anywhere near world-class scale, nor does it have the sprawling, hyperscale data-centre capacity needed for large-model training and inference at scale. That's why the Adani Group's announcement of a planned $100bn investment in renewable-powered AI data centres and a sovereign cloud platform by 2035 is significant, even if stretched over a decade. This commitment, unveiled at the AI Impact Summit in Delhi, comes amid wider interest in India's AI infra build-out: govt is reportedly targeting up to $200bn in data-centre investments to make India a global AI hub. Already, Adani has explored investing in Google's AI data-centre projects in India, signalling private sector appetite to add compute muscle.

Meanwhile, worldwide AI development is exploding. Computation used for training powerful models – often described as "training compute" – continues to rise rapidly, demanding vast clusters of specialised chips. Large tech firms have poured vast sums into AI: US alone saw nine-figure investments in 2024 and continued heavy spending in 2025 and 2026, dwarfing early Indian commitments.

This intensity reflects a simple truth: AI is no longer a novelty. Tools like Claude's latest upgrade are reshaping professional work, while video models such as Seedance now unsettle creatives. India's advantage –a huge talent pool – gives it one pillar of strength. But without serious investments in compute and foundational model research, it will only ever achieve "half-sovereignty". Chips, meanwhile, remain a longerterm endeavour. Even half sovereignty, however, is better than none – and India's current moment is an opportunity to build it.

Date: 18-02-26

That Green Stretch

In Nicobar or in Aravalis, narrow approach to measure environmental impacts is a serious problem

TOI Editorials

NGT's dismissal of concerns over the environmental cost of the Great Nicobar project is almost certain to be challenged in Supreme Court. The scale of the project – a port, power plant, airport and township – has deeply alarmed conservationists for long. Great Nicobar's biological wealth and evolutionary significance rival that of Galapagos Islands, often described as a living museum of evolution. It is, to say the least, not an ordinary landscape.

NGT upheld that no coral reefs were found at the precise project footprint and that nearby reefs would be "relocated" for protection. Of the 20,668 coral colonies identified, 16,150 are to be translocated, while the "threat" to the remaining 4,518 will be studied. The relocation plan, first documented in 2019, is projected to take 30 years, with the initial decade alone costing ₹55cr. This technocratic framing echoes the incremental weakening of safeguards seen in the Aravalis over decades. Institutions tasked with environmental protection often reduce complex ecological realities to narrow definitional thresholds – hills above 100m in Aravalis, "no coral reef, no nesting" in Galathea Bay. Both claims on Galathea Bay are contested. But even if accepted, corals enjoy the same legal protection as tigers and elephants. That protection must mean preservation in situ, not displacement.

Marine ecosystem is already under stress from climate change – warming waters, bleaching events and mangrove loss. Dredging Galathea Bay, with inevitable silt displacement, and felling rainforest will only intensify these pressures.

Afforestation cannot replicate the intricate web of a mature ecosystem. Nicobar's strategic imperatives are real but they cannot justify a narrow reading of environmental risks that can irreversibly damage biodiversity and ecological balance.

Date: 18-02-26

एआई के उपयोग पर एक स्पष्ट नीति बनानी जरूरी

संपादकीय

दो सप्ताह पहले एन्थ्रोपिक द्वारा नए एआई टूल के लांच की घोषणा से भारत सहित दुनिया की तमाम एआई सेवा कंपनियों के शेयर इस डर से गिर गए कि उनका और उनकी कंपनियों में कार्यरत लाखों इंजीनियरों का काम भी यह टूल करने लगेगा। लेकिन दिल्ली में चल रही एआई इम्पैक्ट समिट के पहले दिन ही बेंगलुरु में अपनी कंपनी की इकाई का उद्घाटन करते हुए एन्थ्रोपिक के सीईओ ने इस नई क्रांतिकारी तकनीकी को अंगीकार करने की गति के लिए भारत की प्रशंसा की और सरकार से कहा कि गवर्नेंस की क्षमता बढ़ने के लिए भी इसका उपयोग करे। इसके उलट भारत सरकार के मुख्य आर्थिक सलाहकार (सीईए) ने समिट के ही एक सत्र में आगाह किया कि अगर इस तकनीकी का सही इस्तेमाल नहीं हुआ तो देश में सामाजिक-आर्थिक अस्थिरता बढ़ सकती है। साथ ही उनका मानना था कि शिक्षा और अन्य ऐसे क्षेत्रों में- जहां समुचित मैन पावर नहीं है- एआई का सहयोग लेना विकास को तेज करेगा और जॉब्स भी दिलाएगा। सीईए का कहना था कि अगर हम आधारभूत शिक्षा में मजबूती नहीं लाए, उच्च कोटि की स्किलिंग की रफ्तार नहीं बढ़ाई, नियामक बंदिशें खत्म नहीं कीं और रोजगार देने वाले सेवा क्षेत्र में विस्तार नहीं किया तो देश मौका चूक जाएगा। इस बीच सरकार ने प्राइमरी स्तर की शिक्षा से ही एआई की शिक्षा और प्रयोग का खाका बनाया है। उन कार्यों के लिए जिनमें मानव श्रम सक्षम नहीं है - इस टेक्नोलोजी का इस्तेमाल सही कदम होगा। लेकिन अंधाधुंध प्रयोग से बेरोजगारी बढ़ेगी।

Date: 18-02-26

अंतरिक्ष के क्षेत्र में हमारे पैर मजबूती से टिके रहने चाहिए

शशि थरूर, (पूर्व केंद्रीय मंत्री और सांसद)

दशकों से इसरो देश की वैज्ञानिक प्रतिष्ठा का आधार रहा है। मंगलयान के साथ भारत पहले ही प्रयास में मंगल की कक्षा में पहुंचने वाला पहला देश बना था तो चंद्रयान-3 के जरिए उसने चंद्रमा के दक्षिणी ध्रुव पर रोवर उतारने का ऐतिहासिक कीर्तिमान भी स्थापित किया।

यह सब इतने बजट में किया गया, जितने में हॉलीवुड की किसी स्पेस-एपिक के प्रमोशन का खर्च भी मुश्किल से कवर हो पाता। लेकिन पिछले एक वर्ष में इसरो के गौरवशाली रिकॉर्ड पर तीन प्रमुख मिशन विफलताओं की छाया पड़ गई है,

जिनमें पीएसएलवी के लगातार दो विफल प्रक्षेपण भी शामिल हैं। 'किफायती इनोवेशन' और 'अडिग विश्वसनीयता'- इन दो स्तंभों पर खड़े कार्यक्रम के लिए यह केवल तकनीकी झटका भर नहीं है; साख का संकट भी है।

पीएसएलवी लगभग 30 वर्षों से भारत के अंतरिक्ष कार्यक्रम का मुख्य आधार रहा है। इसी ने भारत को चंद्रमा और मंगल तक पहुंचाया और लगभग 400 विदेशी उपग्रहों को सफलतापूर्वक कक्षा में स्थापित कर वैश्विक प्रक्षेपण परिदृश्य में भारत को एक मुकाम दिलाया। लेकिन हाल में पीएसएलवी-सी61 (मई 2025) और पीएसएलवी-सी62 (जनवरी 2026) अभियानों के दौरान तीसरे चरण में आई गड़बड़ियों के कारण अर्थ-ऑब्जर्वेशन और सामरिक महत्व के उपग्रहों का नुकसान हुआ है। ये दुर्घटनाएं इसरो और उसके मूल उद्देश्य के बीच बढ़ती दूरी को दर्शाती हैं।

अपने प्रारंभिक चरण में भारत का अंतरिक्ष कार्यक्रम जनता की आवश्यकताओं पर आधारित था। तर्क यह था कि यदि उपग्रह-तकनीक को विकास का साधन बनाया जाए, तो यह जीवन बदल सकती है, अर्थव्यवस्था को शक्ति दे सकती है और विश्व में भारत की स्थिति को नए सिरे से परिभाषित कर सकती है। इसरो ने इस विजन को साकार किया। उसने उपग्रहों की एक सुदृढ़ प्रणाली विकसित की, जो लाखों लोगों के लिए जीवनरेखा बनी।

भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह प्रणाली और उसके बाद जियोसिंक्रोनस सैटेलाइट शृंखला ने दूरदराज के गांवों तक कनेक्टिविटी पहुंचाई। इससे वंचित आबादी के लिए टेलीमेडिसिन संभव हुई और उन छात्रों के लिए दूरस्थ शिक्षा के अवसर खुले, जो अन्यथा पीछे छूट सकते थे।

पंजाब और तमिलनाडु के खेतों में किसान रिसोर्ससैट जैसे अर्थ-ऑब्जर्वेशन उपग्रहों से प्राप्त आंकड़ों का उपयोग फसलों के स्वास्थ्य की निगरानी और जल संसाधनों के प्रबंधन के लिए करते हैं। चक्रवात के मौसम में इसरो के उपग्रहों से मिलने वाली प्रारंभिक चेतावनियां संवेदनशील समुदायों की समय रहते निकासी सुनिश्चित करती हैं और जीवन बचाती हैं। यह वैसी अंतरिक्ष तकनीक है, जिसके पैर रोजमर्रा के जीवन की जमीन पर मजबूती से टिके हुए हैं।

लेकिन हाल की घटनाएं संकेत देती हैं कि इसरो की बढ़ती महत्वाकांक्षा गुणवत्ता नियंत्रण और आपूर्ति शृंखलाओं पर दबाव डाल रही है। समस्या संसाधनों की भी है। जिस सीमित बजट के साथ भारत ने अपनी पिछली उपलब्धियां हासिल की थीं, वही उसकी सबसे बड़ी बाधा भी था और उसी के कारण वे उपलब्धियां प्रभावी लगती थीं।

आज भारत अंतरिक्ष पर प्रतिवर्ष लगभग 2 अरब डॉलर खर्च करता है, जबकि चीन का व्यय लगभग 16 अरब डॉलर और अमेरिका का लगभग 25 अरब डॉलर है। और जहां भारत वर्तमान में लगभग 21 सक्रिय ऑब्जर्वेशन-सैटेलाइट्स संचालित कर रहा है, वहीं चीन 1,000 से अधिक उपग्रहों का संचालन करता है, जिनमें से 250 डिफेंस के लिए समर्पित हैं।

हमें याद रखना चाहिए कि भारत का अंतरिक्ष कार्यक्रम कोई लग्जरी नहीं है; यह हमारे विकास का एक महत्वपूर्ण साधन, इनोवेशंस का उत्प्रेरक, सुरक्षा का स्तंभ और राष्ट्रीय गौरव का स्रोत है। सौभाग्य से, इसरो पहले भी चुनौतियों पर विजय पा चुका है और उसकी तकनीकी क्षमताएं असंदिग्ध हैं।

दैनिक जागरण

Date: 18-02-26

सरकारों के काम करता सुप्रीम कोर्ट

राजीव सचान, (लेखक दैनिक जागरण में एसोसिएट एडिटर हैं)

पिछले दिनों सुप्रीम कोर्ट ने साइबर धोखाधड़ी और विशेष रूप से डिजिटल अरेस्ट के मामलों को डकैती और लूट करार देते हुए केंद्र सरकार को कई निर्देश दिए। उसने गृह मंत्रालय को हाल में तैयार मानक संचालन प्रक्रिया अर्थात स्टैंडर्ड ऑपरेटिंग प्रोसीजर (एसओपी) लागू करने, सीबीआई को मामलों की पहचान करने और रिजर्व बैंक को संदिग्ध बैंकिंग लेनदेन रोकने के निर्देश दिए। इसी के साथ सुप्रीम कोर्ट ने विभिन्न एजेंसियों के बीच तालमेल के लिए एक मसौदा तैयार करने को भी कहा।

उसने जब डिजिटल अरेस्ट के एक मामले का स्वतः संज्ञान लेकर ऐसे मामलों की सुनवाई शुरू की थी, तब गृह मंत्रालय ने एक एसओपी का प्रस्ताव रखा था। इसका उद्देश्य विभिन्न एजेंसियों के बीच बेहतर समन्वय स्थापित करना और जहां संभव हो, ठगी से निकाली गई राशि की समयबद्ध वापसी सुनिश्चित करना था। यह उल्लेखनीय है कि सुप्रीम कोर्ट के निर्देश पर ही गृह मंत्रालय ने डिजिटल अरेस्ट से जुड़े सभी पहलुओं की व्यापक जांच के लिए एक उच्चस्तरीय अंतर-विभागीय समिति का गठन किया था।

इसी समिति ने एसओपी का प्रस्ताव तैयार किया। प्रश्न यह है कि गृह मंत्रालय ने सुप्रीम कोर्ट के निर्देश पर साइबर धोखाधड़ी रोकने के लिए जो जतन करने शुरू किए, वे उसकी ओर से समय रहते स्वतः क्यों नहीं किए हुए और वह भी तब जब डिजिटल अरेस्ट के मामले बढ़ते ही चले जा रहे हों?

चूंकि कानून एवं व्यवस्था राज्यों का विषय है, इसलिए साइबर ठगी रोकने का काम मुख्यतः राज्य सरकारों का ही है, लेकिन केंद्र सरकार बैंकों, टेलीकॉम कंपनियों और डिजिटल प्लेटफॉर्मों की भूमिका पर तो ध्यान दे ही सकती थी। इस पर गौर करें कि सुप्रीम कोर्ट ने साइबर ठगी के मामले में बैंकों की भूमिका को संदिग्ध पाया और इससे तो सभी परिचित हैं कि डिजिटल अरेस्ट समेत साइबर ठगी के अधिकतर मामलों में वाट्सएप की भूमिका रहती है। साइबर धोखाधड़ी के मामलों की सुनवाई के समय सुप्रीम कोर्ट में यह उल्लेख किया गया कि डिजिटल फ्रॉड के जरिये अब तक 54 हजार करोड़ से भी ज्यादा की रकम हड़पी जा चुकी है।

सुप्रीम कोर्ट के अनुसार यह रकम कई राज्यों के बजट से भी ज्यादा है। क्या यह विचित्र नहीं कि लोगों की हजारों करोड़ रुपये की गाढ़ी कमाई लूटी जा चुकी है, लेकिन केंद्र सरकार ने अपने स्तर पर इस पर वैसी कार्रवाई करना जरूरी नहीं समझा, जैसी अब वह शीर्ष कोर्ट के निर्देश पर कर रही है? साइबर ठगी पर राज्य सरकारें भी कम लापरवाह नहीं। एक आंकड़ा यह कहता है कि 2021 से 2023 के बीच डिजिटल फ्रॉड की 48 लाख शिकायतों के मुकाबले केवल दो लाख एफआईआर दर्ज हुईं। यह स्थिति यही बताती है कि पुलिस साइबर ठगी की रोकथाम के लिए तत्पर नहीं। हैरानी नहीं कि इससे साइबर अपराधियों का दुस्साहस बढ़ रहा है। इसकी भी अनदेखी न की जाए कि आम तौर पर हड़पी गई राशि लोगों को वापस नहीं मिल पाती, क्योंकि पुलिस की इसमें दिलचस्पी नहीं होती।

निःसंदेह बेलगाम होती साइबर ठगी पर ही सुप्रीम कोर्ट सरकारों के हिस्से का काम करने के लिए सक्रिय नहीं हुआ। ऐसे न जाने कितने मामले हैं, जो सरकारों को करने चाहिए, लेकिन उनमें सुप्रीम कोर्ट को हस्तक्षेप करना पड़ता है। हाल में सुप्रीम कोर्ट ने राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों को छह महीने के भीतर सड़क सुरक्षा से जुड़े उपायों को सशक्त करने के लिए नियम बनाने का निर्देश दिया, ताकि गैर-मोटर चालित वाहन और पैदल चलने वालों की गतिविधियों को नियमित किया जा सके और हादसे रोके जा सकें। उसने राष्ट्रीय राजमार्गों के अलावा अन्य सड़कों के रखरखाव के लिए मानक निर्धारित करने का भी निर्देश दिया, ताकि सड़कों की गुणवत्ता सुनिश्चित हो और पैदल यात्रियों को सुरक्षित आवागमन मिले।

इसके अलावा शीर्ष अदालत ने गलत लेन में गाड़ी चलाने और कारों पर अनधिकृत हूटर बजाने जैसे सड़क सुरक्षा से जुड़े मामलों पर भी कठोर नियम बनाने को कहा। क्या ये ऐसे काम हैं, जिनसे केंद्र अथवा राज्य सरकारें अनभिज्ञ हों? एक ऐसे समय जब भारत में मार्ग दुर्घटनाओं में मरने और घायल होने वालों की संख्या तेजी से बढ़ती जा रही हो, तब सरकारों को सड़क हादसे रोकने के लिए स्वतः सक्रिय होना चाहिए, लेकिन सच यह है कि ऐसा नहीं हो रहा है। इतना अवश्य है कि जब कभी किसी मार्ग दुर्घटना में बड़ी संख्या में लोग मरते हैं तो अफसोस जताकर और मुआवजे की घोषणा करने में देर नहीं की जाती।

बहुत दिन नहीं हुए जब बिल्डरों और बैंकों की ओर से ठगे गए लोगों को सुप्रीम कोर्ट में इसलिए गुहार लगाने के लिए मजबूर होना पड़ा, क्योंकि रेरा अथवा अन्यत्र उनकी सुनवाई नहीं हो रही थी। जब सुप्रीम कोर्ट ने पाया कि बैंकों और बिल्डरों ने कई शहरों में सबवेंशन स्कीम के तहत हजारों फ्लैट खरीदारों के साथ ठगी की है, तब उसने सीबीआई को मामले की जांच के आदेश दिए। क्या यह काम सरकारों को नहीं करना चाहिए था? किसी को इस भ्रम में नहीं रहना चाहिए कि जब सुप्रीम कोर्ट कोई मामला अपने हाथ में लेता है तो उसका समाधान हो जाता है। कटु सत्य यह है कि अनेक मामलों की लगातार सुनवाई करते रहने के बाद भी वह समस्या का समाधान नहीं कर पाता। इसका सबसे सटीक उदाहरण है उसकी नाक के नीचे अर्थात दिल्ली-एनसीआर में वायु प्रदूषण से मुक्ति न मिलना।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 18-02-26

क्विक डिलीवरी के दौर में कैसे टिकी हैं किराना दुकानें

मनु जोसेफ, (पत्रकार और उपन्यासकार)

मेरी कॉलोनी का दुकानदार इन दिनों मुझसे कुछ नाखुश रहता है, क्योंकि मैं अब उसके पास नहीं जाता उसे लगता है कि मैं उससे ऐसी-ऐसी चीजें मांगता हूं, जो उसके पास होती नहीं हैं और उसे नीचा दिखाने के लिए एक आधुनिकस्टोर पर चला जाता हूं, जहां महंगे अनाज 'होलमार्क' व 'ऑर्गेनिक फूड' के संकेत के साथ पैक किए जाते हैं। कुछ महीने पहले एक लंबे अंतराल के बाद उसकी दुकान पर गया और उससे 'ब्लैक राइस' के बारे में पूछा, तो उसने इसके बारे में कभी सुना ही न था ।

हाल ही में जब मैं फिर से उसकी दुकान पर गया, तो वह मुझे ऐसे देख रहा था, जैसे मैं कोई हिसाब-किताब करने आया हूं। मैंने पूछा, ब्लिंकिट, जेप्टो जैसे 'क्विक- डिलीवरी एप्स' के जमाने में दुकानदारी कैसी चल रही है ? उसने जवाब दिया, 'अच्छी चल रही है। उनसे मुझे कोई खास फर्क नहीं पड़ा है। आस-पास देखिए, बहुत सारे लोग यहां आते हैं।' इन एप्स ने उन पर कुछ असर डाला है? इस पर उसने कहा, 'बस थोड़ा सा लेकिन लोगों को स्टोर पर आना ही पड़ता है।'

सर्वेक्षणों के मुताबिक, बड़े शहरों में किराना स्टोर काफी प्रभावित हुए हैं। जोमैटो जैसे फूड-डिलीवरी एस रेस्टोरेंट का मुनाफा खा रहे हैं। ब्लिकिट और जेप्टो जैसे क्विक- डिलीवरी एप्स किराना स्टोर्स से सामान नहीं लेते, क्योंकि उनके अपने वेयरहाउस हैं। मेरे वाला दुकानदार आसपास के किराना दुकानदारों, अमेजन और करीबी सुपरस्टोर से मुकाबला कर रहा है। वह बहुत स्मार्ट है और कम मेहनताने पर गरीब लोगों को अपनी दुकान में स्टाफ रखकर अपने परिवार का पालन- पोषण कर रहा है। उसका कहना है, वह क्विक- डिलीवरी एप्स से भी बेफिक्र है।

कोई और समय होता, तो उसके लिए सर्वोत्तम उपाय उधारी परसामान बेचना होता, लेकिन इसकी यहां किसी को जरूरत नहीं है। उसने एक वाट्सएप ग्रुप बनाया है और मुफ्त होम डिलीवरी कर रहा है। यह सच है कि लोगों के पास समय की कमी है, लेकिन यह भी सच है कि उनके पास बहुत समय है। लोगबाग आमतौर पर यह जताना चाहते हैं कि उनके पास समय नहीं है। वे कहते हैं कि उनके पास किताब, अखबार, मैगजीनपढ़ने, यहां तक कि फिल्म और क्रिकेट मैच देखने के लिए भी समय नहीं है। हां! कुछ लोगों के पास समय की इतनी कमी होती है कि वे टीवी भी अफरातफरी में देखते हैं।

सवाल उठता है किऐसे लोग अपने बचाए हुए समय 'क्या करते हैं? सच तो यह है कि एक खास वर्ग के लोगों के पास इतना समय है कि उन्हें यह सोचना पड़ता है कि इसका करना क्या है? भले ही वे 'समय नहीं है' का जुमला फेंककर उन

कामों से बचते हैं, जिनमें उनकी दिलचस्पी नहीं होती। कई चीजों में बढ़ती कुशलता और कम मजदूरी में घरेलू सहायक मिल जाने से लोगों के पास इतना समय हो गया है कि उन्हें इस बचे हुए समय का कुछ हिस्सा उन कामों के लिए निकालना पड़ता है, जो उन्हें 'कीमती' लगता है। जैसे किसी स्टोर पर जाना, एक फल उठाना, उसे रखकर दूसरा फल उठाना, उसे रखना, फिर सब्जी उठाना, उसे देखना और फिर वापस रख देना जैसे क्रियाकलाप में उन्हें 'व्यस्त' होना पड़ता है।

यह वक्त बितानेका उनका अपना तरीका है। एक किराना स्टोर की घटना है। वहां मैंने एक आदमी को एक सेब को घूरते हुए देखा, फिर दूसरे को । इस पर मुझे अंग्रेजी की एक कहावतयाद आ गई 'सेब और संतरे की तुलना करना।' कोई आदमी एक सेब की तुलना दूसरे सेब से क्यों करेगा? यह उतना ही अजीब है, जितना सेब और संतरे की तुलना करना। मैं समझता हूं कि किराना स्टोर में लोग क्यों एक सेब उठाते हैं और फिर दूसरा असल में, वे फल नहीं पहचान रहे हैं, बल्कि अपना समय व्यतीत कर रहे हैं। अमीर बुजुर्ग लोग विशेष रूप से समय नहीं व्यतीत कर पाते हैं, तो वे किराना स्टोर पर भीड़ लगाते हैं।

एक बार कोलकाता के वीजा सेंटर पर मैंने एक बुजुर्ग को देखा, जो इस बात से हैरान थे कि वीजा की प्रक्रिया इतनी जल्दी खत्म कैसे हो गई? वे इसमें कुछ घंटे लगने की उम्मीद से आए थे। मुझे तो यह भी शक हुआ कि उन्हें सच में वीजा की जरूरत थी भी या नहीं। उन्होंने इसलिए आवेदन कर दिया था, क्योंकि उन्हें कुछ करना था।